॥ॐ॥

।।ॐ श्री परमात्मने नमः।।

॥श्री गणेशाय नमः॥

पुरुषसूक्त

विषय-सूची

पुरुषसूक्त शुक्ल –यजुर्वेद.....3
पुरुषसूक्त ऋग्वेद –.....7

पुरुषसूक्त – शुक्ल यजुर्वेद

शुक्ल यजुर्वेद, अध्याय ३१ । १-१६

पुरुषसूक्त में सोलह मन्त्र हैं तथा इसकी महत्वता का विचार इसी तथ्य से किया जा सकता है की पुरुष सूक्त प्राय: तीनो वेदों तथा अन्य ब्राह्मण, संहिताओं मे थोड़े बहुत शब्दांतर से यथावत मिलता है। पुरुष सूक्त ऋग्वेद के दसवें मण्डल मे नब्बेवा सूक्त, यजुर्वेद का ३१ वाँ अध्याय, अथर्ववेद के उन्नीसवें काण्ड मे छठा सूक्त, तैत्तिरीयसंहिता, शतपथब्राह्मण तथा तैत्तिरीय आरण्यक मे भी प्राप्त होता है। वेदोक्त पूजा-अर्चना में पुरुष सूक्त के सोलह मन्त्रों का प्रयोग भगवान के षोडशोपचार-पूजन तथा यज्ञ में होता है।

ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।
स भूमिꣳ सर्वत स्पृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशाङ्गलम् ॥१॥

उन परम पुरुषके सहस्रों मस्तक, सहस्रों नेत्र और सहस्रों चरण हैं। वे इस सम्पूर्ण विश्व की भूमि को सब ओर से व्याप्त करके इससे दस अंगुल ऊपर स्थित हैं अर्थात् वे ब्रह्माण्डमें व्यापक होते हुए उससे भिन्न भी हैं। ॥१॥

पुरुष एवेदꣳसर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥२॥

यह जो इस समय वर्तमान है, जो बीत गया और जो आगे होनेवाला है, वह सब वे परम पुरुष ही हैं। इसके अतिरिक्त वे देवताओं के तथा जो अन्न से जीवित रहते हैं, उन सबके भी ईश्वर हैं ॥२॥

एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥३॥

यह भूत, भविष्य, वर्तमान से सम्बद्ध समस्त जगत् इन परम पुरुष का वैभव है। वे अपने इस विभूति-विस्तार से भी महान् हैं। उन परमेश्वर के एकपाद विभूति – चतुर्थांश में ही यह पंचभूतात्मक विश्व है। उनकी शेष त्रिपाद्विभूति में शाश्वत दिव्यलोक (वैकुण्ठ, गोलोक, साकेत, शिवलोक इत्यादि) हैं ॥३॥

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत् पुनः।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अभि ॥४॥

वे परम पुरुष स्वरूपतः इस मायिक जगत से परे त्रिपाद्विभूति में प्रकाशमान हैं। इस विश्व के रूप में उनका एक पाद ही प्रकट हुआ है अर्थात् एक पाद से वे ही विश्वरूप भी हैं, इसलिये वे ही सम्पूर्ण जड़ एवं चेतनमय उभयात्मक जगत को परिव्याप्त किये हुए हैं ॥४॥

ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भुमिमथो पुरः ॥५॥

उन्हीं आदिपुरुष से विराट् उत्पन्न हुआ। वे परम पुरुष ही विराट् के अधिपुरुष-अधिदेवता रूप से उत्पन्न होकर अत्यन्त प्रकाशित हुए। बाद में उन्होंने भूमि (लोकादि) तथा शरीर (जीव) उत्पन्न की ॥५॥

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम्।
पशूस्ताँश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ॥६॥

जिसमें सब कुछ हवन किया गया है, उस यज्ञपुरुष ने उसी से दही, घी आदि उत्पन्न किये और वायु में, वन में एवं ग्राम में रहनेयोग्य पशु उत्पन्न किये ॥६॥

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दाꣳसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायते ॥७॥

उसी सर्वहुत यज्ञपुरुष से ऋग्वेद एवं सामवेदके मन्त्र उत्पन्न हुए, उसी से यजुर्वेदके मन्त्र उत्पन्न हुए और उसी से सभी छन्द भी उत्पन्न हुए ॥७॥

तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः ॥८॥

उसी से घोड़े उत्पन्न हुए, उसी से गायें उत्पन्न हुईं और उसी से भेड़ बकरियाँ उत्पन्न हुईं। वे दोनों ओर दांत वाले हैं ॥८॥

तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये॥९॥

देवताओं, साध्यों तथा ऋषियोंने सर्वप्रथम उत्पन्न हुए उस यज्ञ पुरुष को कुशापर अभिषिक्त किया और उससे उसका यजन किया ॥९॥

यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।
मुखं किमस्यासीत् किं बाहू किमूरू पादा उच्यते ॥ १०॥

पुरुष का जब विभाजन हुआ तो उसमें कितनी कल्पनाएँ की गयीं? उसका मुख क्या था? उसके बाहु क्या थे? उसके जांघ क्या थी ? और उसके पैर क्या कहे जाते हैं? ॥१०॥

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याꣳ शूद्रो अजायत ॥११॥

ब्राह्मण इसका मुख था (मुख से ब्राह्मण उत्पन्न हुए) । क्षत्रिय दोनों भुजाएँ बने (दोनों भुजाओं से क्षत्रिय उत्पन्न हुए) । इस पुरुष की जंघाएँ ही वैश्य हुईं अर्थात् उनसे वैश्य उत्पन्न हुए और पैरों से शूद्रवर्ण प्रकट हुए ॥११॥

चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत।
श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत॥१२॥

इस परम पुरुष के मन से चन्द्रमा उत्पन्न हुए, नेत्रों से सूर्य प्रकट हुए, कानों से वायु और प्राण तथा मुख़ से अग्नि की उत्पत्ति हुई ॥१२॥

नाभ्या आसीदन्तरिक्ष शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ अकल्पयन्॥१३॥

उन्हीं परम पुरुष की नाभि से अन्तरिक्ष लोक उत्पन्न हुआ, मस्तक से स्वर्ग प्रकट हुआ, पैरों से पृथिवी, कानों से दिशाएँ प्रकट हुईं। इस प्रकार समस्त लोक उस पुरुषमें ही कल्पित हुए। ॥१३ ॥

यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।
वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ॥१४॥

जिस पुरुषरूप हविष्य से देवों ने यज्ञ का विस्तार किया, वसन्त उसका घी था, ग्रीष्म काष्ठ एवं शरद् ऋतु हवि थी ॥१४॥

सप्तास्यासन् परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः।
देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन् पुरुषं पशुम् ॥१५॥

देवताओं ने जब यज्ञ करते समय (संकल्प से) पुरुष रूप पशु का बन्धन किया, तब सात समुद्र इसकी परिधि (मेखलाएँ) थे। इक्कीस प्रकारके छन्दों की (गायत्री, अतिजगती और कृति में प्रत्येक के सात-सात प्रकार से) समिधाएँ बनीं ॥१५॥

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥१६॥

देवताओंने (पूर्वोक्त रूपसे) यज्ञके द्वारा यज्ञस्वरूप परम पुरुष की आराधना की। इस यज्ञ से सर्वप्रथम धर्म उत्पन्न हुआ । उन धर्मो के आचरणसे वे देवता महान् महिमावाले होकर उस स्वर्गलोक का सेवन करते हैं, जहाँ प्राचीन साध्य देवता निवास करते हैं। ॥१६॥

पुरुषसूक्त – ऋग्वेद

ऋग्वेद, मुद्गलोपनिषद्

मुद्गलोपनिषद् के अनुसार पुरुषसूक्त के प्रारम्भिक चार मन्त्रों में वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न एवं अनिरुद्ध-इन चार भगवत् स्वरूपों का वर्णन भी होता है।

प्रथम मन्त्र में भगवान् के वासुदेव स्वरूप का वर्णन है। दूसरे मन्त्रमें उनके संकर्षण-स्वरूपका वर्णन हैं। तीसरे मन्त्र में प्रद्युम्न स्वरूप का वैभव है। चतुर्थ मन्त्र में भगवान् का भगवान्का अनिरुद्ध दुर्निवार स्वरूप है।

ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।
स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्॥१॥

उन परम पुरुषके सहस्रों मस्तक, सहस्रों नेत्र और सहस्रों चरण हैं। वे इस सम्पूर्ण विश्व की भूमि को सब ओर से व्याप्त करके इससे दस अंगुल ऊपर स्थित हैं अर्थात् वे ब्रह्माण्डमें व्यापक होते हुए उससे भिन्न भी हैं। ॥१॥

ॐ पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥२॥

यह जो इस समय वर्तमान है, जो बीत गया और जो आगे होनेवाला है, वह सब वे परम पुरुष ही हैं। इसके अतिरिक्त वे देवताओं के तथा जो अन्न से जीवित रहते हैं, उन सबके भी ईश्वर हैं ॥२॥

ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥ ३॥

यह भूत, भविष्य, वर्तमान से सम्बद्ध समस्त जगत् इन परम पुरुष का वैभव है। वे अपने इस विभूति-विस्तार से भी महान् हैं। उन परमेश्वर के एकपाद विभूति – चतुर्थांश

में ही यह पंचभूतात्मक विश्व है। उनकी शेष त्रिपाद्विभूति में शाश्वत दिव्यलोक (वैकुण्ठ, गोलोक, साकेत, शिवलोक इत्यादि) हैं ॥३॥

ॐ त्रिपादूर्ध्व उदैत् पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत् साशनानशने अभि॥४॥

वे परम पुरुष स्वरूपतः इस मायिक जगत से परे त्रिपाद्विभूति में प्रकाशमान हैं। इस विश्व के रूप में उनका एक पाद ही प्रकट हुआ है अर्थात् एक पाद से वे ही विश्वरूप भी हैं, इसलिये वे ही सम्पूर्ण जड़ एवं चेतनमय उभयात्मक जगत को परिव्याप्त किये हुए हैं ॥४॥

ॐ ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भुमिमथो पुरः ॥५॥

उन्हीं आदिपुरुष से विराट् उत्पन्न हुआ। वे परम पुरुष ही विराट् के अधिपुरुष-अधिदेवता रूप से उत्पन्न होकर अत्यन्त प्रकाशित हुए। बाद में उन्होंने भूमि (लोकादि) तथा शरीर (जीव) उत्पन्न की ॥५॥

ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम्।
पशूस्ताँश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ॥६॥

जिसमें सब कुछ हवन किया गया है, उस यज्ञपुरुष ने उसी से दही, घी आदि उत्पन्न किये और वायु में, वन में एवं ग्राम में रहनेयोग्य पशु उत्पन्न किये ॥६॥

ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दाꣳसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायते ॥७॥

उसी सर्वहुत यज्ञपुरुष से ऋग्वेद एवं सामवेदके मन्त्र उत्पन्न हुए, उसी से यजुर्वेदके मन्त्र उत्पन्न हुए और उसी से सभी छन्द भी उत्पन्न हुए ॥७॥

ॐ तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः ॥८॥

उसी से घोड़े उत्पन्न हुए, उसी से गायें उत्पन्न हुईं और उसी से भेड़ बकरियाँ उत्पन्न हुईं। वे दोनों ओर दांत वाले हैं ॥८॥

ॐ तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये ॥९॥

देवताओं, साध्यों तथा ऋषियोंने सर्वप्रथम उत्पन्न हुए उस यज्ञ पुरुष को कुशापर अभिषिक्त किया और उससे उसका यजन किया ॥९॥

ॐ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।
मुखं किमस्यासीत् किं बाहू किमूरू पादा उच्यते ॥१०॥

पुरुष का जब विभाजन हुआ तो उसमें कितनी कल्पनाएँ की गयीं? उसका मुख क्या था? उसके बाहु क्या थे? उसके जांघ क्या थी ? और उसके पैर क्या कहे जाते हैं? ॥१०॥

ॐ ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याꣳ शूद्रो अजायत ॥११॥

ब्राह्मण इसका मुख था (मुख से ब्राह्मण उत्पन्न हुए) । क्षत्रिय दोनों भुजाएँ बने (दोनों भुजाओं से क्षत्रिय उत्पन्न हुए) । इस पुरुष की नों जंघाएँ ही वैश्य हुईं अर्थात् उनसे वैश्य उत्पन्न हुए और पैरों से शूद्रवर्ण प्रकट हुआ ॥११॥

ॐ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत।
श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत॥१२॥

इस परम पुरुष के मन से चन्द्रमा उत्पन्न हुए, नेत्रों से सूर्य प्रकट हुए, कानों से वायु और प्राण तथा मुख़ से अग्नि की उत्पत्ति हुई ॥१२॥

ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष शीष्र्णो द्यौः समवर्तत।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ अकल्पयन्॥१३॥

उन्हीं परम पुरुष की नाभि से अन्तरिक्ष लोक उत्पन्न हुआ, मस्तक से स्वर्ग प्रकट हुआ, पैरों से पृथिवी, कानों से दिशाएँ प्रकट हुईं। इस प्रकार समस्त लोक उस पुरुषमें ही कल्पित हुए। ॥१३॥

ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।

वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ॥ १४॥

जिस पुरुषरूप हविष्य से देवों ने यज्ञ का विस्तार किया, वसन्त उसका घी था, ग्रीष्म काष्ठ एवं शरद् ऋतु हवि थी ॥१४॥

ॐ सप्तास्यासन् परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः।
देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन् पुरुषं पशुम्॥ १५॥

देवताओं ने जब यज्ञ करते समय (संकल्प से) पुरुष रूप पशु का बन्धन किया, तब सात समुद्र इसकी परिधि (मेखलाएँ) थे। इक्कीस प्रकारके छन्दों की (गायत्री, अतिजगती और कृति में प्रत्येक के सात-सात प्रकार से) समिधाएँ बनीं ॥१५॥

ॐ वेदाहमेतं पुरुषं महान्त मादित्यवर्णं तमसस्तु पारे।
सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीरो नामानि कृत्वाभिवदन् यदास्ते ॥१६॥

तमस् (अविद्यारूप अन्धकार)-से परे आदित्य के समान प्रकाशस्वरूप उस महान् पुरुष को मैं जानता हूँ। सबकी बुद्धि में रमण करने वाले वह परमेश्वर सृष्टि के प्रारंभ में समस्त रूपों की रचना करके उनके नाम रखता है; और उन्हीं नामों से व्यवहार करता हुआ सर्वत्र विराजमान होता है। ॥१६॥

ॐ धाता पुरस्ताद्यमुदाजहार शक्रः प्रविद्वान् प्रदिशश्चतस्रः ।
तमेवं विद्वानमृत इह भवति नान्यः पन्था विद्यते अयनाय ॥१७॥

पूर्वकाल में ब्रह्माजीने जिनकी स्तुति की थी, इन्द्र ने चारों दिशाओं में जिसे व्याप्त जाना था, उस परम पुरुषको जो इस प्रकार, सर्वस्व रूप से , जानता है, वह यहीं अमृतपद प्राप्त कर लेता है। इसके अतिरिक्त और कोई मार्ग निज-निवास (स्वस्वरूप या भगवद्धाम) की प्राप्ति का नहीं है ॥१७॥

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवा स्तानि धर्माणि प्रथमान्यांसन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥१८॥

देवताओं ने यज्ञ के द्वारा यज्ञस्वरूप परम पुरुष की आराधना की। इस यज्ञसे सर्वप्रथम सब धर्म उत्पन्न हुए। उन धर्मो के आचरण से वे देवता महान् महिमावाले होकर उस स्वर्गलोक का सेवन करते हैं, जहाँ प्राचीन साध्य देवता निवास करते हैं ॥१८॥

संकलनकर्ता:

श्री मनीष त्यागी

संस्थापक एवं अध्यक्ष

श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

www.shdvef.com

।।ॐ नमो भगवते वासुदेवाय:।।